5 पं. दीनदयाल उपाध्याय

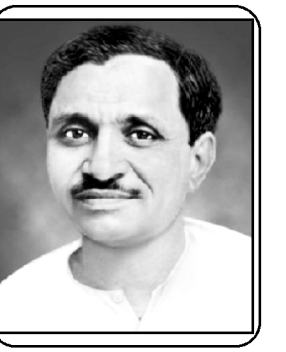

लेखक : एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म**—25 सितम्बर, 1916 ई०।
- **जन्म-स्थान**—नगला चन्द्रभान (मथुरा)।
- **पिता**—भगवती प्रसाद उपाध्याय।
- **माता**—रामप्यारी।
- **सम्पादन**—पाञ्चजन्य, स्वदेश।
- **लेखन विधा :** निबन्ध, उपन्यास, काव्य।
- **भाषा :** जनप्रचलित आम बोलचाल की भाषा।
- **शैली** : विचारात्मक, विवेचनात्मक एवं आलोचनात्मक।
- **प्रमुख रचनाएँ**—सम्राट चन्द्रगुप्त, शंकराचार्य की जीवनी, एकात्म मानववाद, भारतीय अर्थनीति : दशा और दिशा आदि।
- **मृत्यु**—11 फरवरी, 1968 ई०।

दीनदयाल उपाध्याय का जन्म 25 सितम्बर, 1916 ई० को उत्तर प्रदेश राज्य के मथुरा जिले के नगला चन्द्रभान ग्राम में हुआ था। अब इस ग्राम को 'पंडित दीनदयाल उपाध्याय धाम' नाम से जाना जाता है। इनके परदादा का नाम पंडित हरिराम उपाध्याय था जो एक प्रख्यात ज्योतिषी थे। इनके पिता का नाम भगवती प्रसाद उपाध्याय तथा माँ का नाम रामप्यारी था। इनके पिता जलेसर में सहायक स्टेशन मास्टर के रूप में कार्यरत थे और माँ बहुत ही धार्मिक विचारधारा वाली महिला थीं। इनके छोटे भाई का नाम शिवदयाल उपाध्याय था। दुर्भाग्यवश मात्र ढाई वर्ष के ही थे, तभी इनके पिता का असामयिक निधन हो गया। इसके बाद इनका परिवार राजस्थान राज्य के जयपुर जिले के ग्राम धनकिया में इनके नाना के साथ रहने लगा। यहाँ परिवार दुःखों से उबरने का प्रयास ही कर रहा था कि तपेदिक रोग के इलाज के दौरान इनकी माँ दो छोटे बच्चों को छोड़कर संसार से चली गयीं। इनका मात्र 10 वर्ष की अवस्था में इनके नाना का भी निधन हो गया। मामा ने इनका पालन-पोषण अपने बच्चों की तरह किया। छोटी अवस्था में ही अपना ध्यान रखने के साथ ही साथ इन्होंने अपने छोटे भाई के अभिभावक का दायित्व भी निभाया। परन्तु दुर्भाग्य से भाई को चेचक की बीमारी हो गयी और 18 नवम्बर, 1934 ई० को उसका निधन हो गया। दीनदयाल जी ने कम उम्र में ही अनेक उतार-चढ़ाव देखा। परन्तु अपने दृढ़ निश्चय से जिन्दगी में आगे बढ़े। इन्होंने सीकर से हाईस्कूल की परीक्षा पास की। जन्म से बुद्धिमान और प्रतिभाशाली दीनदयाल को स्कूल और कालेज में अध्ययन के दौरान कई स्वर्ण पदक और प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए। इन्होंने अपनी स्कूल की शिक्षा बिड़ला कॉलेज पिलानी और स्नातक की शिक्षा कानपुर विश्वविद्यालय के सनातन धर्म कॉलेज से पूरी की। इसके पश्चात् इन्होंने सिविल सेवा की परीक्षा पास की, लेकिन आम जनता की सेवा के लिए इस नौकरी का इन्होंने परित्याग कर दिया।

दीनदयाल उपाध्याय अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्षों से ही समाजसेवा के प्रति पूर्णतया समर्पित थे। वर्ष 1937 में अपने कॉलेज के दिनों में कानपुर में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ (आर० एस० एस०) के साथ जुड़े। वहाँ इन्होंने आर० एस०

एस0 के संस्थापक डॉ0 हेडगेवार से बातचीत की और संगठन के प्रति पूरी तरह से अपने आप को समर्पित कर दिया। वर्ष 1942 में कॉलेज की शिक्षा पूर्ण करने के बाद इन्होंने न तो नौकरी के लिए प्रयास किया और न ही विवाह किया, बल्कि संघ की शिक्षा का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए आर0 एस0 एस0 के 40 दिवसीय शिविर में भाग लेने नागपुर चले गये।

डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी द्वारा सन् 1951 में स्थापित किये गये भारतीय जनसंघ का इन्हें प्रथम महासचिव नियुक्त किया गया। ये लगातार 1967 ई० तक जनसंघ के महासचिव बने रहे। इनकी कार्यक्षमता, खुफिया गतिविधियों और परिपूर्णता के गुणों से प्रभावित होकर डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी कहते थे कि–यदि मेरे पास दो दीनदयाल हों, तो मैं भारत का राजनीतिक चेहरा बदल सकता हूँ। परन्तु सन् 1953 में डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी के असमय निधन से पूरे संगठन की जिम्मेदारी दीनदयाल उपाध्याय के युवा कंधों पर आ गयी। भारतीय जनसंघ के 14वें वार्षिक अधिवेशन में दीनदयाल उपाध्याय को दिसम्बर, 1967 ई० में कालीकट में जनसंघ का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। 11 फरवरी 1968 ई0 को इनका देहावसान हो गया। कहा जाता है कि मुगलसराय रेलवे स्टेशन पर इनका निष्प्राण शरीर पाया गया था।

दीनदयाल उपाध्याय एक चर्चित पत्रकार भी थे। उपाध्याय के अन्दर की पत्रकारिता तब प्रकट हुई जब इन्होंने लखनऊ से प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका 'राष्ट्रधर्म' में वर्ष 1940 के दशक में कार्य किया। अपने आर0 एस0 एस0 के कार्यकाल के दौरान इन्होंने एक साप्ताहिक समाचार पत्र 'पाञ्चजन्य' और एक दैनिक समाचार पत्र 'स्वदेश' का संपादन भी किया था। इन्होंने नाटक 'चन्द्रगुप्त मौर्य' और हिन्दी में शंकराचार्य की जीवनी लिखी। इन्होंने राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के संस्थापक डॉ0 के0 बी0 हेडगेवार की जीवनी का मराठी से हिन्दी में अनुवाद किया। इनकी प्रसिद्ध साहित्यिक कृतियों में 'सम्राट चन्द्रगुप्त', 'जगत्गुरु शंकराचार्य', 'अखण्ड भारत क्यों?', 'राष्ट्र जीवन की समस्यायें', 'राष्ट्र चिन्तन' और 'राष्ट्र जीवन की दिशा' आदि हैं।

प्रगति के मानदंड

('सिद्धान्त और नीति' के सम्पादित अंश)

जन्म लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति के भरण-पोषण की, उसके शिक्षण की जिससे वह समाज के एक जिम्मेदार घटक के नाते अपना योगदान करते हुए अपने विकास में समर्थ हो सके, उसके लिए स्वस्थ एवं क्षमता की अवस्था में जीविकोपार्जन की, और यदि किसी भी कारण वह संभव न हो तो भरण-पोषण की तथा उचित अवकाश की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी समाज की है। प्रत्येक सभ्य समाज इसका किसी न किसी रूप में निर्वाह करता है। प्रगति के यही मुख्य मानदण्ड हैं। अतः न्यूनतम जीवन-स्तर की गारंटी, शिक्षा, जीविकोपार्जन के लिए रोजगार, सामाजिक सुरक्षा और कल्याण को हमें मूलभूत अधिकार के रूप में स्वीकार करना होगा।

● एकात्म मानववाद

हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था का केन्द्र मानव होना चाहिए जो 'यत् पिण्डे तद्ब्रह्मांडे' के न्याय के अनुसार समष्टि का जीवमान प्रतिनिधि एवं उसका उपकरण है। भौतिक उपकरण मानव के सुख के साधन हैं, साध्य नहीं। जिस व्यवस्था में भिन्नरुचिलोक का विचार केवल एक औसत मानव से अथवा शरीर–मन–बुद्धि–आत्मायुक्त अनेक एषणाओं से प्रेरित पुरुषार्थचतुष्टयशील, पूर्ण मानव के स्थान पर एकांगी मानव का ही विचार किया जाय, वह अधूरी है। हमारा आधार एकात्म मानव है जो अनेक एकात्म मानववाद (Integral Humanism) के आधार पर हमें जीवन की सभी व्यवस्थाओं का विकास करना होगा।

● आह्वान

भारत के अधिकांश राजनीतिक दल पाश्चात्य विचारों को लेकर ही चलते हैं। वे वहाँ किसी न किसी राजनीतिक विचारधारा से सम्बद्ध एवं वहाँ के दलों की अनुकृति मात्र हैं। वे भारत की मनीषा को पूर्ण नहीं कर सकते और न चौराहे पर खड़े विश्वमानव का मार्ग–दर्शन कर सकते हैं।

भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा लेकर चलने वाले भी कुछ राजनीतिक दल हैं। किन्तु वे भारतीय संस्कृति की सनातनता को उसकी गतिहीनता समझ बैठे हैं और इसलिए बीते युग की रूढ़ियों अथवा यथास्थिति का समर्थन करते हैं। संस्कृति के क्रांतिकारी तत्त्व की ओर उनकी दृष्टि नहीं जाती। वास्तव में समाज में प्रचलित अनेक कुरीतियाँ, जैसे–छुआछूत, जाति–भेद, दहेज, मृत्युभोज, नारी–अवमानना आदि भारतीय संस्कृति और समाज के स्वास्थ्य की सूचक नहीं बल्कि रोग के लक्षण हैं। भारत के अनेक महापुरुष, जिनकी भारतीय परम्परा और संस्कृति के प्रति अनन्य निष्ठा थी, इन बुराइयों के विरुद्ध लड़े। आज के अनेक आर्थिक और सामाजिक विधानों की हम जाँच करें तो पता चलेगा कि वे हमारी सांस्कृतिक चेतना के क्षीण होने के कारण युगानुकूल परिवर्तन और परिवर्द्धन की कमी से बनी हुई रूढ़ियाँ, परकीयों के साथ संघर्ष की परिस्थिति से उत्पन्न माँग को पूरा करने के लिए अपनाये गये उपाय अथवा परकीयों द्वारा थोपी गयी या उनका अनुकरण कर स्वीकार की गयी व्यवस्थाएँ मात्र हैं। भारतीय संस्कृति के नाम पर उन्हें जिन्दा रखा जा सकता।

एकात्म मानव विचार भारतीय और भारतबाह्य सभी चिंताधाराओं का सम्यक् आकलन करके चलता है। उनकी शक्ति और दुर्बलताओं को भी परखता है और एक ऐसा मार्ग प्रशस्त करता है जो मानव को अब तक के उसके चिंतन, अनुभव और उपलब्धि की मंजिल से आगे बढ़ा सके।

पाश्चात्य जगत् ने भौतिक उन्नति तो की, किंतु उसकी आध्यात्मिक अनुभूति पिछड़ गयी। भारत भौतिक दृष्टि से पिछड़ गया और इसलिए उसकी आध्यात्मिकता शब्दमात्र रह गयी। 'नाऽयमात्मा बलहीनेन लभ्यः'–अशक्त आत्मानुभूति नहीं कर सकता। बिना अभ्युदय के निःश्रेयस की सिद्धि नहीं होती। अतः आवश्यक है कि 'बलमुपास्य' के आदेश के अनुसार

हम बल–संवर्द्धन करें, अभ्युदय के लिए प्रयत्नशील हों, जिससे अपने रोगों को दूर कर स्वास्थ्यलाभ कर सकें तथा विश्व के लिए भार न बनकर उसकी प्रगति में साधक और सहायक हो सकें। ('सिद्धान्त और नीति' से)

शब्दार्थ

भरण-पोषण = पालन-पोषण। **समर्थ** = सक्षम। **मूलभूत** = मौलिक। **जीविकोपार्जन** = जीविका के लिए कमाना। **उपकरण** = यन्त्र। **भौतिक उपकरण** = भौतिक साधन। **एषणाओं** = इच्छाओं। **अवमानना** = अपमान। **विधानों** = कानूनों। **आकलन** = मूल्यांकन। **शब्दमात्र** = नाममात्र। **संवर्द्धन** = वृद्धि करना। **सहायक** = मददगार। **निर्वाह** = गुजारा। **मानदण्ड** = मापने का पैमाना। **एकात्म** = समानता, एकप्राण, अभिन्न। **मानववाद** = दयाभाव। **साध्य** = मन अथवा शरीर के प्रयासों से प्राप्त। **पुरुषार्थ** = विवेकशील प्राणी का लक्ष्य। **एकांगी** = सीमित, एकपक्षीय। **पाश्चात्य** = पश्चिमी देश। **मनीषा** = अभिलाषा, इच्छा। **परकीयों** = जिस विवाहिता का सम्बन्ध परपुरुष से हो। **सम्यक्** = पूरा, उचित। **आकलन** = अनुमान लगाना। **परखना** = किसी वस्तु या व्यक्ति के गुण-दोष जाँचना। **अशक्त** = कमजोर, असमर्थ। **निःश्रेयस** = कल्याण, मंगल। **अभ्युदय** = उन्नति। **यत् पिण्डे तद्ब्रह्माण्डे** = जो ब्राह्मण में है, वही पिण्ड में है। **समष्टि** = सम्पूर्णता, सामूहिकता। **भिन्नरुचिलोक** = संसार से पृथक् रुचि। **ऐषणाओं** = इच्छाओं। **पुरुषार्थ चतुष्टय** = चारों पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष)। **सम्बद्ध** = जुड़े हुए। **अनुकृति** = नकल। **सनातनता** = सदैव रहने का भाव। **नारी अवमानना** = नारी का अपमान। **अनन्य** = एकमात्र। **क्षीण** = दुर्बल, कमजोर। **परिवर्द्धन** = अच्छी तरह होने वाली वृद्धि। **भारतबाह्य** = भारत से बाहर की। **सम्यक्** = भलीभांति, ठीक। **आकलन** = अनुमान। **अशक्त** = शक्तिहीन, असमर्थ। **नाऽयमात्मा बलहीनेन लभ्यः** = यह आत्मा निर्बलों को प्राप्त नहीं होता। **अभ्युदय** = क्रमशः होने वाली वृद्धि। **बलमुपास्य** = बल उपासना के योग्य।

अभ्यास प्रश्न

गद्यांश पर आधारित प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों पर आधारित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

(क) हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था का केन्द्र मानव होना चाहिए जो 'यत् पिण्डे तद्ब्रह्मांडे' के न्याय के अनुसार समष्टि का जीवमान प्रतिनिधि एवं उसका उपकरण है। भौतिक उपकरण मानव के सुख के साधन हैं, साध्य नहीं। जिस व्यवस्था में भिन्नरुचिलोक का विचार केवल एक औसत मानव से अथवा शरीर–मन–बुद्धि–आत्मायुक्त अनेक एषणाओं से प्रेरित पुरुषार्थचतुष्टयशील, पूर्ण मानव के स्थान पर एकांगी मानव का ही विचार किया जाय, वह अधूरी है। हमारा आधार एकात्म मानव है जो अनेक एकात्म मानववाद के आधार पर हमें जीवन की सभी व्यवस्थाओं का विकास करना होगा।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश के लेखक एवं पाठ का नाम लिखिए।

(ii) लेखक के अनुसार भौतिक उपकरण मानव के लिए क्या हैं?

(iii) लेखक ने सम्पूर्ण व्यवस्था का केन्द्र किसे कहा है?

(iv) भौतिक उपकरण के विषय में लेखक के क्या विचार हैं?

(v) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(ख) पाश्चात्य जगत् ने भौतिक उन्नति तो की, किंतु उसकी आध्यात्मिक अनुभूति पिछड़ गयी। भारत भौतिक दृष्टि से पिछड़ गया और इसलिए उसकी आध्यात्मिकता शब्दमात्र रह गयी। 'नाऽयमात्मा बलहीनेन लभ्यः' – अशक्त आत्मानुभूति नहीं कर सकता। बिना अभ्युदय के निःश्रेयस की सिद्धि नहीं होती। अतः आवश्यक है कि 'बलमुपास्य' के आदेश के अनुसार हम बल–संवर्द्धन करें, अभ्युदय के लिए प्रयत्नशील हों, जिससे अपने रोगों को दूर कर स्वास्थ्यलाभ कर सकें तथा विश्व के लिए भार न बनकर उसकी प्रगति में साधक और सहायक हो सकें।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) पाश्चात्य जगत ने किस क्षेत्र में उन्नति की?

(iii) उपर्युक्त गद्यांश में किस बात को व्यक्त किया गया है?

(iv) लेखक ने भारत के सन्दर्भ में क्या कहा है?

(v) गद्यांश के रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(ग) आज के अनेक आर्थिक और सामाजिक विधानों की हम जाँच करें तो पता चलेगा कि वे हमारी सांस्कृतिक चेतना के क्षीण होने के कारण युगानुकूल परिवर्तन और परिवर्द्धन की कमी से बनी हुई रूढ़ियाँ, परकीयों के साथ संघर्ष की परिस्थिति से उत्पन्न माँग को पूरा करने के लिए अपनाए गये उपाय अथवा परकीयों द्वारा थोपी गयी या उनका अनुकरण कर स्वीकार की गयी व्यवस्थाएँ मात्र हैं। भारतीय संस्कृति के नाम पर उन्हें जिन्दा रखा जा सकता।

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यावतरण का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) भारतीय नीतियाँ एवं सिद्धान्त किस प्रकार विदेशियों की नकलमात्र बनकर रह गये हैं?

(iv) समय के अनुरूप परिवर्तन एवं विकास न होने का प्रमुख कारण क्या है?

(v) भारत की सांस्कृतिक चेतना के कमजोर होने का प्रमुख कारण क्या है?

(घ) जन्म लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति के भरण-पोषण की, उसके शिक्षण की, जिससे वह समाज के एक जिम्मेदार घटक के नाते अपना योगदान करते हुए अपने विकास में समर्थ हो सके, उसके लिए स्वस्थ एवं क्षमता की अवस्था में जीविकोपार्जन की और यदि किसी भी कारण वह सम्भव न हो तो भरण-पोषण की तथा उचित अवकाश की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी समाज की है। प्रत्येक सभ्य समाज इसका किसी न किसी रूप में निर्वाह करता है। प्रगति के यही मुख्य मानदण्ड हैं, अतः न्यूनतम जीवन स्तर की गारंटी, शिक्षा, जीविकोपार्जन के लिए रोजगार, सामाजिक सुरक्षा और कल्याण को हमें मूलभूत अधिकार के रूप में स्वीकार करना होगा। **[2019 CN, CP]**

प्रश्न– (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

अथवा पाठ का शीर्षक एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंश की व्याख्या कीजिए।

(iii) लेखक की दृष्टि में सभ्य समाज के क्या दायित्व हैं?

अथवा समाज का मुख्य उत्तरदायित्व क्या है?

(iv) 'घटक' तथा 'मानदण्ड' शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(v) लेखक की दृष्टि में मूलभूत अधिकार क्या हैं?

(vi) प्रगति का मापदण्ड क्या है?

(vii) जीविकोपार्जन और भरण-पोषण में क्या अन्तर है?

(ङ) भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा लेकर चलने वाले भी कुछ राजनीतिक दल हैं। किन्तु वे भारतीय संस्कृति की समानता को उसकी गतिहीनता समझ बैठे हैं और इसलिए बीते युग की रूढ़ियों अथवा यथास्थिति का समर्थन करते हैं। संस्कृति के क्रान्तिकारी तत्त्व की ओर उनकी दृष्टि नहीं जाती। वास्तव में समाज में प्रचलित अनेक कुरीतियाँ, जैसे–छुआछूत, जाति-भेद, दहेज, मृत्युभोज, नारी-अवमानना आदि भारतीय संस्कृति और समाज के स्वास्थ्य की सूचक नहीं बल्कि रोग के लक्षण हैं। भारत के अनेक महापुरुष जिनकी भारतीय परम्परा और संस्कृति के प्रति अनन्य निष्ठा थी, इन बुराईयों के विरूद्ध लड़े।

[2020 ZD]

(i) भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा रखने वाले कौन हैं?

(ii) भारतीय संस्कृति के क्रान्तिकारी तत्त्व की ओर किसकी दृष्टि नहीं जाती है?

(iii) समाज में प्रचलित कुरीतियों को लेखक ने क्या माना है?
(iv) किन लोगों की भारतीय संस्कृति पर दृढ़ निष्ठा थी?
(v) पाठ एवं लेखक के नाम का उल्लेख कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पंडित दीनदयाल उपाध्याय का जीवन-परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।

[2019 CL, CO, 20 ZC, ZD, ZF]

2. पंडित दीनदयाल उपाध्याय का साहित्यिक परिचय दीजिए।

अथवा पंडित दीनदयाल उपाध्याय का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी कृतियों का उल्लेख कीजिए।

3. 'प्रगति के मानदण्ड' पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
4. निम्नलिखित सूक्तियों की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए—
(क) हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था का केन्द्र मानव होना चाहिए।
(ख) पाश्चात्य जगत ने भौतिक उन्नति तो की, किन्तु उसकी आध्यात्मिक अनुभूति पिछड़ गयी।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था का केन्द्र बिन्दु क्या होना चाहिए?
2. समाज की प्रमुख जिम्मेदारी क्या है?
3. भारत के अधिकांश राजनीतिक दल किस विचारधारा से प्रभावित हैं?
4. हमें अभ्युदय के लिए क्यों प्रयत्नशील होना चाहिए?
5. भारतीय राजनीतिक दल भारतीय संस्कृति की सनातनता को क्या मानते हैं?